सामाजिक विज्ञान

भाग–II

सामाजिक और राजनीतिक जीवन

अध्याय 9

समकालीन भारतीय समाज

भारतीय समाज एक विविधतायुक्त समाज है। हम पढ़ चुके हैं कि विविधताओं के होते हुए भी भारत में विभिन्न लोगों, जातियों और समुदायों के बीच एक अनोखी समानता एवं एकता सदैव विद्यमान रही है। भारतीय समाज एवं संस्कृति का इतिहास अति प्राचीन है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है और इस नियम के अनुसार भारतीय समाज भी अछूता नहीं रहा है। भारतीय समाज एक जीवन्त व गतिशील समाज है। यहाँ समाज में परिवर्तनशीलता के साथ–साथ निरन्तरता भी देखने को मिलती है। भारतीय जनमानस आधुनिकता के साथ–साथ ही अनेक परम्परागत संस्थाओं एवं मूल्यों में विश्वास करता है। इस अध्याय में हम विभिन्न बिंदुओं के अंतर्गत भारतीय समाज की समकालीन स्थिति पर चर्चा करेंगे।

विवाह, परिवार और नातेदारी

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में विवाह एक पवित्र संस्कार माना जाता रहा है। किन्तु वर्तमान में इसकी प्रकृति एवं स्वरूप में परिवर्तन आ रहा है। विवाह एक पवित्र संस्कार से समझौते की स्थिति में आ गया है। विवाह संबंधों के स्थायित्व में कमी देखी जा रही है। हिन्दू समाज में भी तलाक का चलन प्रारम्भ होने के साथ–साथ बढ़ भी रहा है, विशेषकर शहरी क्षेत्रों में। इन परिवर्तनों के पीछे पाश्चात्य शिक्षा एवं संस्कृति का बढ़ता प्रभाव, बिखरते संयुक्त परिवार, नगरीयकरण, औद्योगिकीकरण आदि कारण माने जा सकते हैं।

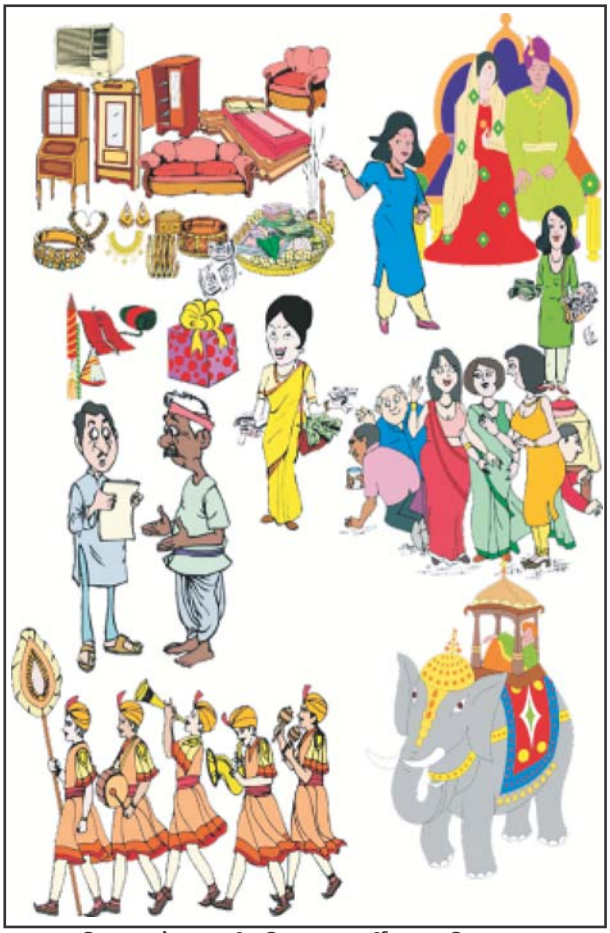

विवाह में बढ़ती फिजूलखर्ची एवं दिखावा

वर्तमान में शहरी जीवन शैली की प्रधानता बढ़ रही है। शहरी रहन–सहन ने संयुक्त परिवार के स्वरूप को कमजोर किया है। एकल और छोटे परिवारों का जोर बढ़ता जा रहा है। रिश्तेदारी संबंध सीमित होते जा रहे हैं, हालाँकि ग्रामीण क्षेत्रों में ये संबंध अब भी शहरी क्षेत्रों के मुकाबले अधिक निकट के बने हुए हैं। परिवार के परम्परागत कार्यों में परिवर्तन होता जा रहा है। परम्परागत व्यवसाय के स्थान पर नये काम–धन्धे अपनाये जाने लगे हैं, जैसे किसान का बेटा अब खेती से अलग कार्य करने लगा है। शिक्षा प्राप्त अनेक युवक नया व्यवसाय करते हैं, जिसके अवसर प्रायः उनके पैतृक स्थानों पर उपलब्ध नहीं होते हैं। फलस्वरूप वे अपने पैतृक परिवार से अलग हो

जाते हैं। बहुत से ग्रामीण युवा गाँव से शहरों में और छोटे शहरों के अनेक युवा बडे शहरों में चले जाते हैं। सामान्यतः एक बात अब भी देखी जा सकती है, वह यह है कि परिवार चाहे अलग–अलग स्थानों पर रह रहे हों, परन्तु माता–पिता तथा सगे संबंधियों के प्रति सामाजिक कर्त्तव्यों को आज भी निभाने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार कार्यात्मक रूप से संयुक्त परिवार व्यवस्था प्रचलित है।

अब परिवार में वरिष्ठ सदस्य के स्थान पर स्वयं निर्णय लेने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। परिवार के सदस्य अपने पेशे, शिक्षा, मनोरंजन और राजनीतिक जीवन में अलग–अलग रूचियों के अनुसार लगे रहते हैं। शहरों में विभिन्न अवसरों पर सामाजिक और आर्थिक सहायता के लिए लोग जाति और रिश्तेदारी की अपेक्षा पडोसियों, परिचितों और दफ्तर के सहयोगियों पर अधिक निर्भर देखे जाते हैं।

सामाजिक प्रथाएँ

समाज से सती प्रथा का उन्मूलन हो चुका है। कानूनी प्रतिबन्ध के बावजूद दहेज प्रथा और कुछ मात्रा में बाल–विवाह प्रथा आज भी समाज में मौजूद हैं। विवाह आदि समारोहों में फिजूल–खर्ची और दिखावा बढ़ता जा रहा है, किन्तु साथ ही दूसरी ओर सामूहिक विवाह सम्मेलनों का चलन भी चल पड़ा है। अनेक परम्परावादी विश्वासों और विकार्यवादी प्रथाओं को त्याग दिया गया है। आज अनेक परम्परागत सामाजिक निषेधों को उपेक्षित किया जा रहा है। बाजार और आधुनिकता के दबाव में सामाजिक प्रथाओं ,त्योहारों और रिवाजों के तौर तरीके बदलते जा रहे हैं।

गतिविधि :

1. अपने गाँव या शहर में प्रचलित सामाजिक कुप्रथाओं की सूची बनाइए।
2. परिवार या मोहल्ले के बड़े–बुजुर्गों से उनके बचपन से लेकर वर्तमान समय तक सामाजिक परम्पराओं में हुए बदलावों पर चर्चा करके एक चार्ट तैयार कीजिए।

शिक्षा, बाजारीकरण एवं उपभोक्तावाद का प्रभाव

शिक्षा ने देश के लोगों का दृष्टिकोण विस्तृत किया है। अपने अधिकारों एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता का विचार बढ़ा है। वैज्ञानिक नवाचारों की सामाजिक स्वीकृति ने रहन–सहन के स्तर को उठाने और लोगों में भौतिक कल्याण प्राप्त करने की आकांक्षाओं को बढ़ावा दिया है। औद्योगिकीकरण और मध्यम वर्ग के उदय से समाज के मूल्यों में परिवर्तन हुए हैं। तर्कसंगत भावना का विकास हुआ है। व्यक्तिवादिता, समानता और न्याय की विचारधाराओं का महत्त्व बढ़ा है। महिलाएँ शिक्षा और रोजगार प्राप्त करके स्वतंत्रता अर्जित कर रही हैं।

बढ़ता उपभोक्तावाद

'बाजारीकरण' विस्तृत होता जा रहा है। उदाहरण के लिए अब विवाह जैसे पारिवारिक व सामाजिक कार्य भी व्यावसायिक 'विवाह ब्यूरो' द्वारा फीस लेकर तय एवं सम्पन्न करवाने में भूमिका निभाने लगे हैं। जहाँ पहले सामाजिक कौशल और शिष्टाचार जैसे आचरण व्यक्ति को परिवार के लोगों द्वारा सिखाए जाते थे, वहीं अब व्यावसायिक संस्थान 'व्यक्तित्व सँवारने' के पाठ्यक्रम चला रहे हैं। करीब चार दशक पूर्व लोग पानी के बाजारीकरण की सोचते भी नहीं थे, वहीं अब गाँवों तक में पानी की बोतल बिक्री के लिए उपलब्ध होना कोई आश्चर्य नहीं है।

समाज में बाजारवाद के दबाव में उपभोक्तावाद बढ़ता जा रहा है। उपभोक्तावादी जीवन शैली में आप अपने घर को किस तरह सजाते हैं, किस तरह के कपड़े पहनते हैं, किस तरह के मनोरंजन को पसन्द करते हैं, शादी आदि समारोह किस तरह आयोजित करते हैं, वस्तु का कौनसा मॉडल उपयोग करते हैं– ये सब बातें लोगों की समाज में उनकी प्रस्थिति और प्रतिष्ठा से जुड़ गयी हैं। अधिक से अधिक वस्तुओं को खरीदना , उनका उपभोग व प्रदर्शन करना– यह लोगों की जीवन शैली बन चुकी है। संस्कृति भी बाजार का हिस्सा बन चुकी है। भारतीय संस्कृति के गौरव– योग, आयुर्वेद और पुष्कर जैसे मेलों पर बाजारीकरण के प्रभाव परिलक्षित होना इसके उदाहरण हैं।

जाति प्रथा

जाति के धार्मिक आधार समाप्त हो रहे हैं, किन्तु सामाजिक संस्था के रूप में जाति मजबूत हो रही है। राजनीतिक रूप से जातिवाद में बढ़ोतरी हुई है। जातीय संगठन मजबूत हुए हैं। वर्चस्व स्थापित करने की होड़ ने जातीय सद्भाव को ठेस पहुँचाई है। जाति चुनावी राजनीति का आधार बन गई है, जबकि प्रारम्भ में जातीय भाईचारे की भूमिका चुनाव जीतने में निर्णायक रहती थी। सार्वभौम वयस्क मताधिकार पर आधारित चुनावी लोकतंत्र ने उन जातियों को राजनीतिक शक्ति प्रदान कर दी है, जिनकी जनसंख्या काफी बड़ी है। ये जातियाँ राजनीति और खेतिहर व्यवस्था में निर्णायक भूमिका अदा कर रही हैं।

देश की विकासात्मक नीतियों से लाभान्वित शहरी उच्च वर्ग व उच्च मध्यम वर्ग के लिए जातीयता का महत्त्व कम हो गया प्रतीत होता है। इन्हें किसी गंभीर प्रतिस्पर्धा का सामना नहीं करना पड़ता। ये समाज में विशेषाधिकार प्राप्त प्रस्थिति में आ गए हैं। शिक्षित वर्ग ने अतिवादी जातीय व्यवहारों को छोड़ना प्रारम्भ कर दिया है। वे व्यक्तिवाद और योग्यता को अधिक महत्त्व देते हैं। नगरीकरण और शहरों में सामूहिक रहन–सहन की परिस्थितियों ने जाति–बंधन के परम्परागत स्वरूपों को दुर्बल बनाया है। अंतर्जातीय विवाह बढ़ते जा रहे हैं। अब एक जाति विशेष में जन्मा व्यक्ति आसानी से व्यवसाय परिवर्तन कर सकता है। आधुनिक उद्योगों व तकनीकी ने नए–नए रोजगार के अवसर तैयार किए हैं, जिनके लिए इस प्रकार के कोई परम्परागत जातीय व सामाजिक नियम नहीं हैं कि फलां कार्य केवल फलां जाति वाले व्यक्ति ही करेंगे। अमीरी और गरीबी का संबंध सामान्यतः जाति से नहीं रह गया है। आज हर जाति में अमीर भी हैं, तो गरीब भी हैं। समान आर्थिक और सामाजिक आधार वाली जातियों में नजदीकियाँ आ गई हैं। अन्तर्जातीय खान–पान के निषेध कमजोर हो रहे हैं।

आधुनिक नीतियों और क्रिया–कलापों का प्रभाव जनजातीय संस्कृति, समाज और अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा है। जहाँ तक आरक्षण व अन्य संरक्षण प्राप्त जाति वर्गों की बात है, उनमें भी एक शिक्षित एवं

शक्तिशाली मध्यम वर्ग का उद्‌भव हो चुका है। आरक्षण की माँग बढ़ती जा रही है और इसने राजनीतिक स्वरूप ग्रहण कर लिया प्रतीत होता है।

गतिविधि :

अपने परिवार के बुजुर्ग सदस्यों से चर्चा करके आज से लगभग 30 वर्ष पूर्व से वर्तमान समय तक विवाह समारोहों के आयोजन में आये परिवर्तनों की सूची बनाइए।

बढ़ता शहरीकरण एवं शहरी जीवन शैली

20वीं शताब्दी के आरम्भिक काल में भारत की कुल जनसंख्या का मात्र 11 प्रतिशत आबादी शहरों में रहती थी, किन्तु 21 वीं शताब्दी (जनगणना–2011) में भारत की 31.16 प्रतिशत जनसंख्या शहरों में रहने लग गई। इसके पीछे मुख्य कारण यह है कि कृषि आधारित ग्रामीण जीवन शैली का आर्थिक और सामाजिक महत्त्व घटता जा रहा है, वहीं उद्योग आधारित नगरीय जीवन शैली का प्रभाव समाज में बढ़ता जा रहा है। सकल घरेलु उत्पाद में कृषि का योगदान जहाँ पहले आधे से अधिक रहता था, वहीं अब यह घटकर एक–चौथाई रह गया है। अब गाँवों में रहने वाले अधिक से अधिक लोग खेती नहीं करके परिवहन–सेवा, व्यवसाय या शिल्प निर्माण जैसे खेती से भिन्न व्यवसायों को अपनाते जा रहे हैं। बहुत बड़ी संख्या में लोग गाँव में रहते हुए भी रोजाना काम करने के लिए गाँव के नजदीकी कस्बे या शहर में जाते हैं। नकद आमदनी कमाने के अवसर गाँवों में घटते जा रहे हैं।

आधुनिक जीवन शैली से प्रभावित युवक

रेडियो, टेलीविजन, समाचार–पत्र जैसे जनसंपर्क एवं जनसंचार के साधनों के जरिये ग्रामीण लोग नगरीय तड़क–भड़क और सुख–सुविधाओं से सुपरिचित हो जाते हैं। उनमें भी वैसा ही जीवन जीने की लालसा उत्पन्न हो जाती है। बाजार की ताकतें ग्रामीण क्षेत्रों पर भी छा गई हैं। छोटे गाँव से बडे गाँव या कस्बे तथा शहर की ओर बढ़ते हुए जनसंक्रमण और टेलीविजन आदि जनसंचार के साधन निरन्तर ग्रामीण तथा नगरीय जीवन के बीच की खाई को पाटते जा रहे हैं। भारतीय समाज का स्वरूप अब ग्रामीण की बजाय नगरीय होता जा रहा है।

साक्षरता संबंधी विषमता

साक्षरता शक्ति संपन्न होने का महत्त्वपूर्ण साधन है। साक्षर व्यक्तियों में आजीविका के विकल्पों के बारे में जागरूकता अधिक होती है और वे ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था में भाग लेते हैं। साक्षरता से स्वास्थ्य के

प्रति जागरूकता आती है और समुदाय के सदस्यों की सांस्कृतिक और आर्थिक कल्याण के कार्यों में सहभागिता बढ़ती है।

भारत में विभिन्न सामाजिक समूहों में साक्षरता संबंधी स्थिति में बहुत भिन्नता पाई जाती है। देश में जहाँ पुरुष साक्षरता 82.14 प्रतिशत है, वहीं महिला साक्षरता 65.46 प्रतिशत ही है। जब बात राजस्थान की करें, तो यहाँ के 79.02 प्रतिशत पुरुष साक्षर है, वहीं मात्र 52.10 प्रतिशत महिलाएँ ही साक्षर हैं, यानी लगभग आधी महिलाएँ निरक्षर हैं। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा पिछड़ा वर्ग की महिलाएँ साक्षरता में अधिक पिछडी हुई हैं।

गिरता लिंगानुपात

भारत इस समय विश्वभर में सबसे युवा देशों में से एक है क्योंकि भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 60.29 प्रतिशत भाग कार्यशील जनसंख्या (15 से 59 वर्ष) का है। अतः भारत के पास काफी बडा और बढ़ता हुआ श्रमिक बल है, जो समृद्धि की दृष्टि से लाभ प्रदान करता है। किन्तु दूसरी ओर विषमता की स्थिति यह है कि भारत में लिंगानुपात में भारी विषमता है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में प्रति एक हजार पुरुषों की आबादी पर 943 महिलाएँ हैं, वहीं राजस्थान में मात्र 928 ही हैं। यह स्थिति बालिकाओं के प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार को प्रदर्शित करती है। हालाँकि इस स्थिति के लिए उत्तरदायी एक कारण– भ्रूण के लिंग परीक्षण पर नियंत्रण व रोक लगाने के लिए कानून बनाकर इसे दण्डात्मक अपराध घोषित कर दिया गया है और लिंगानुपात में सुधार के लिए अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' योजना एक ऐसा ही अभियान है। परन्तु इसके लिए समाज की मानसिकता में परिवर्तन आवश्यक है।

यह था भारतीय समाज की समकालीन प्रवृतियों का एक विवेचन। पश्चिमी प्रभाव और विभिन्न व्यवस्थाओं के आधुनिकीकरण के बाद भी भारतीय संस्कृति जीवन्तता के साथ बनी रहेगी। हम अपने अतीत के प्रति गौरव का भाव लेकर, वर्तमान का यथार्थवादी आकलन कर और भविष्य की महत्वाकांक्षा को लेकर आगे बढ़ते रहेंगे।

शब्दावली

शहरीकरण	–	गाँवों में रोजगार और सुविधाओं की कमी तथा शहरी जीवन शैली के आकर्षण में गाँवों से आकर शहरों में बसने की प्रक्रिया।
विकार्यवादी	–	अप्रकार्यात्मक / व्याधिकीय / नुकसानदायक।
नातेदारी	–	रक्त एवं विवाहमूलक संबंधों की व्यवस्था, रिश्तेदारी।
बाजारीकरण	–	किसी वस्तु का एक उत्पाद के रूप में रूपांतरण करना, ऐसी सेवा या क्रिया–कलाप जिसका आर्थिक मूल्य हो और जिसका बाजार में व्यापार हो सकता हो।

अभ्यास प्रश्न

1. सही विकल्प को चुनिए–

(i) भारत की कुल जनसंख्या का कार्यशील भाग है –

(अ) 60.29 प्रतिशत (ब) 50.21 प्रतिशत

(स) 45.01 प्रतिशत (द) 30 प्रतिशत ( )

(ii) राजस्थान की पुरुष साक्षरता दर है –

(अ) 79.02 (ब) 62.15

(स) 40.12 (द) 34.12 ( )

2. स्तम्भ 'अ' को स्तम्भ 'ब' से सुमेलित कीजिए–

	स्तम्भ 'अ'	स्तम्भ 'ब'
(i)	पैतृक कार्यों से अलग होना	शिक्षित वर्ग
(ii)	सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन होना	बाजारीकरण का दबाव
(iii)	उपभोक्तावाद बढ़ने का कारण	परम्परागत व्यवसाय छोड़ना
(iv)	अतिवादी जातीय व्यवहारों को छोड़ना	शिक्षा और औद्योगिकरण का प्रभाव

3. पारिवारिक एवं नातेदारी सम्बन्धों में बदलाव के कारणों पर प्रकाश डालिए।

4. ''बाजारीकरण के प्रभाव से भारतीय लोगों के रहन–सहन और जीवन शैली में परिवर्तन आ रहा है।''–स्पष्ट कीजिए।

5. ''भारतीय समाज का स्वरूप अब ग्रामीण की बजाय नगरीय होता जा रहा है।''–उदाहरण सहित समझाइए।